प्रथम प्रश्न पत्र - इकाई 1

1

किरातार्जुनीयम् (प्रथम सर्ग)

सन्दर्भ →

संस्कृत साहित्य में उल्लेखित जिन कवियों ने संस्कृत वाङ्मय रूप कानन को अपनी प्रखर मधुरस से सींचा उनमें महाकवि भारवि का नाम सर्व प्रमुख है। ये विचित्र मार्ग के कवि हैं इनके द्वारा रचित 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य की गणना वृहत्त्रयी में की जाती है। इनका समय 600 ईस्वी के आसपास माना जाता है इस महाकाव्य में कुल 18 सर्ग हैं। किरात वेशधारी भगवान शिव तथा अर्जुन के मध्य में हुए संवाद तथा युद्ध इस महाकाव्य का मुख्य विषय है।

प्रस्तुत प्रथम सर्ग में द्यूतक्रीडा में हारे युधिष्ठिर को जब 12 वर्ष का वनवास दिया जाता है तब वे पाण्डव द्वैतवन नामक स्थान में रहते हैं। वहाँ रहते हुए युधिष्ठिर द्वारा दुर्योधन के राज्य शासन तथा प्रजा संबंधी व्यवहार को जानने के लिए एक वनेचर को ब्राह्मण का वेश

Scanned with CamScanner

बनाकर गुप्तचर के रूप मे हस्तीना पुर भेजना, उस गुप्तचर द्वारा सारी घटना बताना तथा युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी तथा चारो भाइयो के समक्ष दुर्योधन की कार्य कुशलता आदि गुणो का वर्णन करना तथा इससे क्रोधित होकर द्रौपदी द्वारा युधिष्ठिर को कटु वचन कहना। इस प्रथम अंग का मुख्य प्रदोपाद्य विषय है।

---

(1)

श्रिय: - - - - - - - - - द्वैतवने वनेचरः

प्रसंग → प्रस्तुत श्लोक में हस्तिनापुर भेजे गए गुप्तचर का पुनः द्वैतवने में आने का वर्णन है।

व्याख्या → द्रौपदी और भाइयो के साथ वन में रहते हुए युधिष्ठिर ने हस्तिनापुर मे दुर्योधन के प्रजा के लिए किये गए कार्य एवं उनके प्रति दुर्योधन का व्यवहार जानने के लिये जिस गुप्तचर को भेजा था

उस गुप्तचर ने ब्रह्मचारी का रूप धारण कर दुर्योधन का सभी हाल जान लिया था और अब वह गुप्तचर पुनः द्वैतवन में युधिष्ठिर के पास आया है।

विशेष → (1) इस पद्य में वंशस्थ छन्द है।
(2) इसमें वृत्त्यनुप्रास अलंकार है।
(3) वनेचर: = वने चरति इति वनेचर: (अलुक् समास)
(4) पालनीम् = पाल् + ल्युट् + ङीप् + द्वितीया + एकवचन
(5) वेदितुम् = विद् + ज्ञाने + तुमुन्

(2)

कृतप्रणामस्य ----- हितैषिण: ॥

प्रसंग → इस पद्य में वनेचर के गुण तथा व्यवहार के बारे में बताया जा रहा है।

व्याख्या → युधिष्ठिर के पास पहुँचकर उस गुप्तचर ने युधिष्ठिर को प्रणाम किया। उसके पश्चात् दुर्योधन के द्वारा जीते गये द्वैतवन पुर राज्य के बारे में बताने को इच्छुक उस वनेचर को बिल्कुल भी दुःख

Scanned with CamScanner

नहीं हो रहा था कि 'हस्तिनापुर राज्य में दुर्योधन अपना कार्यभार बहुत अच्छे से संभाल रहा है', क्योंकि जो वनेचर अपने स्वामी का कल्याण चाहते है वह कभी भी स्वामी से झूठी व मिठी बात नहीं करते है।

विशेष -> (1) हितैषिण: = हितम् इच्छन्ति ये ते हितैषिण:
(2) प्रवक्तुमिच्छन्ति = प्र + वच् + तुमुन् इष् + लट् + प्रथम + बहुवचन
(3) अर्थान्तरन्यास अलंकार है।
(4) इस पद्य में भी वंशस्थ छन्द है।

(3)

द्विषां -- -- -- -- -- -- वाच - माददे॥

प्रसंग -> यहाँ पर युधिष्ठिर के प्रति वनेचर की भावना का वर्णन किया गया है।

व्याख्या -> शत्रुओ के नाश करने के लिए नीति बनाने के उद्देश्य रखने वाले युधिष्ठिर द्वारा भेजे गए गुप्तचर ने युधिष्ठिर को आज्ञा प्राप्त कर शब्द और अर्थ के गुणों से पूर्ण वाक्य कहना आरम्भ किया।

विशेष -> (1) यहाँ गुप्तचर की विशेषताओं का वर्णन है।
(2) वंशस्थ छन्द है।
(3) विनिश्चितार्थाम् = विनिश्चितः अर्थः यस्याः सा विनिश्चितार्था ताम्।
(4) द्विषाम् = द्विष् + क्विप्।

(4)

क्रियासु - - - - - - - दुर्लभं वचः॥

प्रसंग -> प्रस्तुत पद्य में वनेचर युधिष्ठिर को अपने द्वारा अप्रिय बात कहे जाने के लिए पहले ही क्षमा माँग लेता है।

व्याख्या -> हे महाराज! कार्यों में लगे हुए सेवकों को यह ज्ञात होना चाहिए कि वह अपने स्वामी को धोखा न दे क्योंकि जो स्वामी होता है वह उसी की आँखों से देखता है क्योंकि वह स्वयं उस हाल को देखने में असमर्थ होता है। अतः हे महाराज मेरे द्वारा कहे गये वचन चाहे प्रिय हो या अप्रिय हो कृपया आप मुझे क्षमा करें। क्योंकि जो बात हितकारी भी हो और मन को अच्छी भी लगे

ऐसी बात बहुत कम मिलती है

विशेष -> (1) असाधु = न साधु इति असाधु (नञ् तत्पुरुष)।
(2) चारचक्षुषः = चाराः एव चक्षुः येषां ते
(3) इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।
(4) इस पद्य में गुप्तचरों में कर्त्तव्यनिष्ठा एवं सत्यवादिता की आवश्यक है।

(5)

स किंसखा ---- सर्वसम्पदः

प्रसंग -> इस श्लोक से स्वामी व सेवक को कैसा होना चाहिए उसका वर्णन है।

व्याख्या -> गुप्तचर कहता है कि हे युधिष्ठिर जो सेवक अपने स्वामी को हित व अहित की बातों के बारे में नहीं बताता है वह कैसा सेवक हो सकता है? अर्थात् वह एक बुरा सेवक है और जो स्वामी अपने राज्य के प्रति हितकारी बातें करने वाले सेवक को पास

नहीं सुनता वह क्या स्वामी है। अर्थात् वह एक बुरा स्वामी है। क्योंकि राजा व सेवक दोनों का एकसाथ होने पर ही सभी सुख व सम्पति उस राज्य को मिलती है।

विशेष -> (1) यहाँ राजा व सेवक के गुणों व व्यवहार के बारे मे बताया है।

(2) सर्वसम्पद :- सर्वाः सम्पदः
सर्व . सम्पद :
(कर्मधारय)

(3) हितान्न = हितात् + न।

(4) वंशस्थ छन्द है।

(5) यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

(6)

निसर्ग _ _ _ _ _ _ विद्विषाम्"

प्रसंग -> इस पद्य में वनेचर द्वारा युधिष्ठिर को अपनी विनम्रता बताता है।

व्याख्या -> कहाँ तो राजाओं का ~~बुद्धि~~ विशाल चरित्र व उनका स्वभाव और कहाँ मुझ जैसे अज्ञान की तीक्ष्ण।

सुयोधनः → दुर्योधन

बुद्धि अर्थात दोनो में बहुत अन्तर है महाराज ! फिर भी मैं अगर आपके विपक्षियों को राजनीति समझ पाया हु तो केवल यह आपका व आपके गुणों का ही प्रभाव है।

विशेष → (1) निगूढतत्वम् ⇒ निगूढं तत्वं यस्य तत्।
(2) विद्विषाम् = वि + द्विष् + क्विप्।
(3) नयवर्त्म = नयस्य वर्त्म।

(7)

विशंकमानो — — —— सुयोधनः॥

प्रसंग → प्रस्तुत श्लोक में वनेचर दुर्योधन के राजनैतिक नीति द्वारा कैसा राज्य सम्भाल रहा है वह बात कहना आरम्भ करता है।

व्याख्या → वनेचर कहता है कि जुआ मे जीते गये राज्य पर शासन करने वाला दुर्योधन अभी भी वन में निवास करने वाले आप लोगो से भयभीत होता है और अभी भी राज्य नष्ट होने का

डर है। इसीलिए अब वह दुर्योधन छल - कपट से जीते गए राज्य को राजनीति के द्वारा अपने वश में करना चाहता है।

विशेष -> (1) वनाधिवासिनः = वनम् अधि- वसति इति। वनाधिवासी
(2) सुयोधनः = सु + युध + युच।
(3) जेतुम् = जि + तुमुन्।
(4) पराभवम् = परा + भू + अप्

(8)

तथापि जिह्म ------ महात्मभिः॥

प्रसंग -> वनेचर ने जो कहा कि वह दुर्योधन 'नीति से राज्य को जीतना चाहता है' इसी के लिए वह क्या प्रयत्न कर रहा है उसी का यहां वर्णन है -

व्याख्या -> भले ही दुर्योधन आप लोगों से भयभीत है फिर भी कपटी दुर्योधन राज्य के दिलों को जीतने के लिए दया, उदारता आदि गुण व सम्पत्ति के द्वारा अपना यश फैला रहा है क्योंकि

जब कभी अच्छे व्यक्ति के साथ शत्रुता की जाती है तो शत्रुता करने वाले व्यक्ति को उसी के समान अच्छे कार्य करने पड़ते हैं ताकि लोगों को उसकी शत्रुता दिख न पड़े।

विशेष → (1) यहाँ वंशस्थ छन्द है।
(2) इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।
(3) गुणसम्पदा = गुणानां सम्पद गुणसम्पत् तया
(4) तथापि = तथा + अपि
(5) जिह्म: = जहाति सरलमार्गम् इति जिह्म:

(9)

कृतारिषड्वर्गजयेन -- --पौरुषम्

प्रसंग → इस श्लोक में दुर्योधन के द्वारा किये गए नीतियुक्त कार्यों की नीति का वर्णन है।

व्याख्या → दुर्योधन, काम, क्रोध, लोभ, मोह मद और मात्सर्य (ईर्ष्या), जल आदि छः मन के आन्तरिक शत्रुओं को हराकर व मनुष्यों

के अनुसार प्रजा का पालन करने वाला। दुर्योधन आलस्य रहित होकर वे प्रजा के द्वारा राज्य प्राप्त करने को इच्छुक, वह दिन तथा रात के कार्यों को बाँट कर नीतिपूर्वक राज्यभार संभाल रहा है।

विशेष -> (1) विभज्य = वि + भज् + ल्यप्।
(2) पौरुषम् = पुरुषस्य कर्म पौरुषम्।
(3) नक्तन्दिवम् = नक्तं च दिवा च नक्तन्दिवम्।

(10)

सखीनिव ..... साधु बन्धुताम्"

प्रसंग। -> इस पद्य में वनेचर दुर्योधन के व्यवहार परिवर्तन के बारे में बताता है।

व्याख्या -> वनेचर कहता है कि अब दुर्योधन अहंकार रहित होकर सेवकों के साथ मित्रों के समान व्यवहार करता है। मित्रों के साथ भाई-बंधुओं सा व्यवहार करता है तथा भाई-बंधुओं के साथ ऐसा व्यवहार करता है

Scanned with CamScanner

कि दुर्योधन उनके अभ्यस्त हो या उनके ही अधीन हो।

विशेष -> (1) इस श्लोक में उपमा अलंकार है।

(2) सखीन इव = समानं ख्यायते इति सखि।

(3) अनुजीविन: = अनु + जीव + णिनि + द्वितीया + बहु।

Scanned with CamScanner

किरातार्जुनीयम् के प्रश्न

(1.) 'किरातार्जुनीयम्' इत्यस्य कोऽर्थः?
उ० किरातश्च अर्जुनश्च इति किरातार्जुनौ तौ अधिकृत्य कृतं ग्रन्थं किरातार्जुनीयम्

(2.) 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्यस्य रचयिता कः?
उ० भारविः

(3.) 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्ये कति सर्गाः सन्ति?
उ० अष्टादश:

(4.) 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्यस्य कथानकं केन सम्बन्धम् अस्ति?
उ० महाभारतेन

Scanned with CamScanner

(5.) द्यूतक्रीडायाम् पराजित पाण्डवा: कुत्र वसन्ति ?
उ० द्वैत वने

(6.) दुर्योधनं वृत्तान्तं ज्ञातुम् युधिष्ठिर हस्तिनापुर प्रति कं प्रेषयति ?
उ० वनेचरम्

(7.) अर्जुन: कम् अस्त्रं प्राप्त्यर्थं तप करोति ?
उ० पाशुपतास्त्रम्

(8.) 'किरात' महाकाव्यस्य नायक क:
उ० अर्जुन:

(9.) किरातार्जुनीयम् महाकाव्यस्य कस्य छन्दस्य बहुधा प्रयोग:
उ० वंशस्थ

(10.) कस्य अर्थगौरवम् अति प्रसिद्धं अस्ति ?
उ० भारवे:

(11.) 'कुरूणाम् अधिपस्य' शब्द कस्मै प्रयुक्त ?
उ० दुर्योधनाय

(12.) चारचक्षुष् शब्द कस्य कृते प्रयुक्ता?
उ० राज्ञ कृते

(13.) कीदृशः वचः दुर्लभः?
उ० हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः

(14.) राज्ञं चरित्रं कीदृशं भवति?
उ० निसर्गदुर्बोधं

(15.) सर्वसम्पदः कदा रतिं कुर्वन्ति?
उ० हि अनुकूलेषु नृपेषु च अमात्येषु च

?

(16.) दुर्योधनस्य प्रथम नाम किम् आसीत्?
उ० सुयोधनम्

?

(17.) 'दुरोदरच्छद्मजितां' अत्र दुरोदर शब्दस्य कोऽर्थः?
उ० द्यूतक्रीडा

(18.) 'अरिषड्वर्ग' इतस्य कोऽर्थः?
उ० कामं, क्रोधः, मदः, मोहः, लोभः मात्सर्यं (जलन, ईर्ष्या) च

(19.) केन प्रति पद्धतीम् प्रजा पालक पद्धति सर्वोत्तमाः?
उ० मनुना

Scanned with CamScanner

(20.) 'त्रिगण:' शब्दस्य कोऽर्थ ?
उ० धर्म, अर्थ, काम

(21.) दुर्योधन: धर्म विप्लवम् केन रुद्धन्ति ?
उ० दण्डविधानेन

(22.) देवमातृका शब्दस्य कोऽर्थ ?
उ० यस्य प्रदेशस्य जना: कृषि कार्यार्थम् वर्षा जलं आश्रयन्त सा भूमि देवमातृका कथ्यति

(23.) दुर्योधनस्य सैनिका: कीदृश॥
उ० महौजस: मानधना: धनार्चिता: संयति लब्धकीर्तय: धनुभृत: न संहता: न भिन्नवृत्तय अपि तु तस्य असुभि: प्रियाणि समीहितुम्

(24.) 'रुद्ध शासनम्' शब्द: कस्य कृते प्रयुक्त ?
उ० दुर्योधनस्य कृते

(25.) केन अनुमतः दुर्योधन हिरण्यरेत सम्म धिनोति ?
उ० पुरोधसा अनुमत:

निबन्धात्मक प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. किरातार्जुनीयस्य प्रथमसर्गस्य सन्दर्भे भारवेः भाषा-वैशिष्ट्यं सोदाहरणं विवेचनीयम्।

अथवा

'नारिकेलफलसम्मितं वचो भादवेः' इत्युक्तेः वैशिष्ट्यं तद्ग्रन्थमाधारीकृत्य वर्णयन्तु।

अथवा

भारवेः भाषा-शैली विषये एकः लेखः लिखत।

(महाकवि भारवि की भाषा शैली पर एक लेख लिखिये।)

अथवा

किरातार्जुनीयस्य प्रथमसर्गमधिकृत्य भारवेः काव्य वैशिष्ट्यं प्रतिपादयत।

अथवा

भारवेः काव्यशैलीं वर्णयत।

(भारवि की काव्य शैली पर प्रकाश डालिए।)

भारवि की काव्यशैली का निरूपण कीजिए।

उत्तर—भाषा भावों को वहन करने का साधन है। जिस कवि की भाषा जितनी ही अधिक सबल एवं प्रसंगोचित होगी, भावों की उतनी ही अधिक तीव्र अनुभूति वह अपनी कविता के द्वारा

Scanned with CamScanner

करने में सक्षम हो सकेगा। व्याकरण सम्मत एवं सशक्त भाषा के अभाव में कवि के उत्कृष्ट भाव भी प्रेषणीयता को प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं।

आदर्श काव्य शैली के सन्दर्भ में भारवि ने प्रत्यक्ष रूप में कुछ भी नहीं कहा है। परन्तु 'किरातार्जुनीयम्' कथा प्रसंग में ही इसकी ओर कुछ संकेत किया गया है।

द्वितीय सर्ग में भीम के वक्तव्य की प्रशंसा करते हुए युधिष्ठिर उसकी प्रभावपूर्ण वाणी की प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं कि भीम की वाणी में उसकी बुद्धि उसी प्रकार प्रतिबिम्बित हो रही है जिस प्रकार स्वच्छ दर्पण में प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। यह कथन भारवि की कविता के बौद्धिक पक्ष की ओर संकेत करता है। भारवि का यह मत प्रतीत होता है कि काव्य को पढ़कर कवि के बुद्धि वैभव की स्पष्ट प्रतीति होनी चाहिए, किन्तु बौद्धिक चमत्कार के फेर में पड़कर भारवि अपने काव्य के महत्त्वपूर्ण गुणों का परित्याग नहीं करना चाहते। युधिष्ठिर के स्वर में निःसन्देह कवि ही अपनी काव्य शैली के आदर्श का निरूपण कर रहा है। यथा-

स्फुटता न पदैस्पाकृता न च स्वीकृतमर्थ गौरवम्।
रचिता पृथगथीता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित॥

इससे कवि का यही मत प्रतीत होता है कि काव्य की पद योजना में स्पष्टता हो तथा अर्थगौरव का निर्वाह अवश्य होना चाहिए। अर्थ की पुनरुक्ति भी न हो तथा वाक्यों में अभिशिप्त अर्थ प्रकट करने की शक्ति का अभाव भी होना चाहिए। इसके अतिरिक्त काव्य में श्रुति मधुर शब्दों का इतना सुरुचिपूर्ण प्रयोग होना चाहिए कि वह कोमलकान्त पदावली शत्रुओं के मन को भी प्रसन्न कर दे।

यथा-"विविक्तवर्णा भरणा सुख श्रुतिः प्रसादयन्ति हृदयान्यपि द्विषाम्।"

उक्त सभी विशेषताएँ भारवि की कविता में यथास्थान प्राप्त होती हैं।

भारवि की भाषा में हृदयग्राही लालित्य है और कोमल तथा उग्र दोनों ही प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति में वह सक्षम है। भारवि ने 'प्रसन्नगाम्भीर पदा सरस्वती" कहकर अपनी भाषा शैली का आदर्श बतलाया है, अर्थात् उसका कहना है कि पुण्यात्मा लोगों की वाणी प्रसन्न तथा गम्भीर पदों से युक्त होती है, उसमें शब्द सौष्ठव व अर्थगाम्भीर्य रहता है।

भारवि की भाषा में अपने में उक्त सभी गुणों को समाहित किया है। व्याकरण शास्त्र पर भारवि का पूर्ण अधिकार है जिसका उन्होंने अपने शब्द प्रयोगों द्वारा स्थान-स्थान पर प्रत्येक पद के एक व्यञ्जन का प्रयोग किया गया है तो दूसरा सम्पूर्ण श्लोक ही एक व्यञ्जन के द्वारा लिख डाला है-

न नोननुन्नोनी नाना नानानना ननु।
नुन्नोऽनुन्नो नुन्नुनेने नानेन नुन्नुनुन्न नुत॥
(किरात. 15/14)

चित्रालंकारों की योजना ने कीरातार्जुनीयम् के 15वें सर्ग को अत्यन्त दुरूह बना दिया है। इस कृत्रिम काव्य की प्रायः समीक्षकों द्वारा आलोचना की गई है।

अर्थालंकारों का प्रयोग करते हुए भारवि चमत्कार प्रदर्शन को अपना लक्ष्य नहीं बनाते। उनके अर्थालंकार अप्रस्तुत योजना में सहायक होते हैं और वर्ण्य विषय को अत्यन्त कमनीय तथा प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त करते हैं। निदर्शना का सुप्रसिद्ध उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है-

उत्फुल्लस्थललिनीवनाद युष्माद धूतः सरसिज सम्भवः परांगः।
वात्याभिर्वियति बिवर्तितः समन्तादाधत्ते कनक मयात यत्र लक्ष्मीम्॥

Scanned with CamScanner

"खिली हुई स्थल कमलिनी के इस वन में वात्याओं द्वारा उड़ाया हुआ कमल के फूलों का पराग आकाश में चारों ओर मण्डलाकार फैल जाने पर तथा मध्य में पराग की अधिकता के कारण (दण्ड के समान स्थित होकर) सोने के छत्र की शोभा को धारण करता है।"

आकाश में छिटके हुए पराग के सम्बन्ध में सोने का छत्र होने की यह कल्पना अत्यन्त सुन्दर तथा मौलिक है और इसी के कारण भारवि को 'आतपत्र भारवि' के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त हुई थी।

कालिदास के समान अर्थान्तरन्यास भारवि का भी प्रिय अलंकार है। दैनिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली अनेक सरस सूक्तियाँ भारवि ने अर्थान्तरन्यास के द्वारा अपने काव्य में समाविष्ट कर दी हैं। इसके अतिरिक्त उपमा, समासोक्ति, काव्यलिङ्ग, अतिशयोक्ति, व्यतिरेक आदि अलंकारों का प्रयोग भी भारवि ने किया है।

अलंकारों के साथ-साथ छन्दों का भी प्रयोग कुशलतापूर्वक किया गया है। इस महाकाव्य का प्रमुख रस वीर है, अत: वीररसानुकूल वंशस्थ का उन्होंने बहुत प्रयोग किया है। वंशस्थ के अतिरिक्त, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, द्रुतविलम्बित, स्वागत पुष्पिताग्रा आदि छन्दों का प्रयोग किया।

अन्त में हम कह सकते हैं कि भाषा एवं शैली प्रयोग की दृष्टि से भारवि अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। महाकाव्यों के इतिहास से अलंकृत काव्य शैली के प्रवर्तक के रूप में उनकी प्रसिद्धि सदैव रहेगी।

प्रश्न 2. किरातर्जुनीयस्य प्रथमसर्गाधारेण द्रौपद्या: चरित्र-चित्रणं कुरुत।

(किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग के आधार पर द्रौपदी का चरित्र चित्रण कीजिये।)

उत्तर–किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में प्रमुख रूप से दो पात्रों का चरित्र चित्रण उभर कर सामने आया है–दुर्योधन एवं द्रौपदी। इनमें भी दुर्योधन की चारित्रिक विशेषताएँ वनेचर द्वारा प्रस्तुत उसकी शासन व्यवस्था के वर्णन में व्यक्त हुई हैं। द्रौपदी की चारित्रिक विशेषताएँ उसके स्वयं के कथन में जो उसने युधिष्ठिर के प्रति कहा है, उभर कर सामने आई हैं। उसकी चारित्रिक विशेषताओं को संक्षेप में निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है–

1. वीरक्षत्राणी–द्रौपदी इस महाकाव्य की नायिका है। वह एक ओर वीरक्षत्राणी है तथा उसमें तदनुरूप ही शौर्य, उत्साह एवं असाधारण वाक् चातुर्य है। जैसे ही वह युधिष्ठिर के मुख से वनेचर द्वारा कही गई अपने शत्रुओं की उन्नति के समाचार सुनती है, वह व्यथित हो उठती है तथा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए व्याकुल हो उठती है। वह युधिष्ठिर पर ऐसे वाग्बाणों की वर्षा करती है कि युधिष्ठिर ही क्या, पाठक भी विक्षुब्ध हो उठते हैं। उसमें वह प्रबल शक्ति है कि वह निर्जीव को भी सजीव बनाये, कायर को भी धीर बनाये तथा नपुंसक में भी पुंसत्व का संचार कर दें।

2. असाधारण वाक् चातुर्य–द्रौपदी यद्यपि स्त्री है परन्तु उसकी वक्तृत्व शक्ति अपरिमित है। उसे अपनी सीमाओं का भी ज्ञान है तथा किस प्रकार अपनी बात कहनी चाहिए इसका भी पूर्ण ज्ञान है। उसने युधिष्ठिर के समक्ष जो अपने तर्क प्रस्तुत किये हैं वे इतने पुष्ट एवं प्रमाण युक्त हैं कि ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कोई राजनीति विज्ञान का प्रोफेसर (विद्वान्) व्याख्यान दे रहा हो। वह अपना कथन प्रारम्भ करने से पूर्व एक कुशल वक्ता के रूप में यह स्पष्ट कर देती है कि एक नारी होने के नाते उसे युधिष्ठिर जैसे विद्वान् को कोई उपदेश वाक्य नहीं कहने चाहिए, फिर भी वह अपनी मजबूरी व्यक्त करती है तथा कहती है कि मनोव्यथाएँ उसे कहने के लिए बाध्य कर रही हैं।

Scanned with CamScanner

(3) स्वाभिमानी—द्रौपदी स्वाभिमानी है। वह अपने शत्रुओं की उन्नति को सहन करने में समर्थ नहीं है। वह अपमान एवं अपमान से युक्त जीवन व्यतीत करना पसन्द नहीं करती। वह अपमान से इतनी अभिभूत है कि स्त्रीजनोचित लज्जा को छोड़कर निर्भय होकर युधिष्ठिर को शिक्षा और उपालंभ देती है। वह क्रोध को तेजस्विता का लक्षण मानती है। उसकी दृष्टि में जिस मनुष्य में क्रोध नहीं वह मनुष्य नहीं है अपितु नपुंसक है। उसे मनस्वियों द्वारा निन्दित मार्ग पर चलना पसन्द नहीं है। इसलिए वह युधिष्ठिर से कहती है कि वे मनस्विता की रक्षा करें अन्यथा वह आश्रय हीन होकर नष्ट हो जायेगी—

'भवादृ शानचेदधि कुर्वते रतिं
निराश्रयाहन्त हता मनस्विता।'

(4) कूटनीतिज्ञा—द्रौपदी न केवल राजनीति की ज्ञाता है ?अपितु एक कूटनीतिज्ञा है। वह राजनीति विषयक अपनी योग्यता प्रदर्शित करते हुए कहती है कि जो द्यूतों से धूर्तता का व्यवहार नहीं करते हैं, वे मूर्ख हैं। वह अपना कूटनीति विषयक परिचय तक देती है जबकि युधिष्ठिर से कहती है कि आप समय की प्रतीक्षा न करें क्योंकि विजयेच्छु राजा लोग अवसर पाकर पूर्व में की गई सन्धि आदि को तोड़ देते हैं। उनका तो लक्ष्य मात्र विजय प्राप्ति होता है।

संक्षेप में द्रौपदी एक सुयोग्य विदुषी, नीति निपुण एवं वाक् पटु क्षत्राणी है। युधिष्ठिर के प्रति कहे गये उसके कथन में उक्त विशेषतायें स्पष्टतया लक्षित होती हैं।

प्रश्न 3. प्रथमसर्गाधारेण दुर्योधनस्य चरित्रचित्रणं कुरुत।

('दुर्योधन' का चरित्र-चित्रण प्रथम सर्ग के आधार पर कीजिए।)

अथवा

किरातार्जुनीयस्य प्रथमसर्गाधारेण वनेचरवर्णित दुर्योधनस्य विशेषतानां वर्णनं कुरुत।

(किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग के आधार पर वनेचर द्वारा प्रकट दुर्योधन की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।)

उत्तर—भारवि द्वारा रचित 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य में दुर्योधन को प्रतिनायक के रूप में माना गया है। प्रथम सर्ग में यद्यपि दुर्योधन का कथन नहीं है वह अप्रत्यक्ष है। फिर भी किरात वनेचर ने गुप्तचरों के द्वारा उसके बारे में जो कुछ भी कहा है, उसी से दुर्योधन का चरित्र स्पष्ट हो जाता है। कवि ने प्रथम सर्ग में गुप्तचर के माध्यम से दुर्योधन के राज कर्त्तव्यों का ही वर्णन किया है। राज़ा को प्रजा के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए जिससे कि प्रजाजन उस पर अनुरक्त होकर उसके सहायक बन जाये। साथ ही कवि ने शत्रु और मित्र या अधीनस्थ राजाओं के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाये उसे भी व्यक्त किया है। दुर्योधन के चरित्र में निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकट हुई हैं—

(1) कुशल राजा—दुर्योधन एक कुशल राजनीतिज्ञ एवं राजा है, उसकी कार्य प्रणाली का क्रिया व्यापार अत्यन्त गोपनीय है तथा मनुष्यों को उसकी कार्य कुशलता का तब ही आभास होता है जब कभी वह कार्यकर्त्ताओं को पुरस्कृत करता है। उसकी गुप्तचर व्यवस्था उत्तम कोटि की है। वह शंकित रहता हुआ भी चारों ओर अपने विश्वस्त लोगों को रक्षक के रूप में नियुक्त करके स्वयं आशंकित सा दिखलाई देता है। पड़ोसी राजाओं पर उसका आधिपत्य है, वे उसकी आज्ञा को शिरोधार्य प्रसन्नता से करते हैं तथा समय-समय पर हाथी, घोड़े आदि भेंट स्वरूप देकर उसकी सहायता करते हैं। उस दुर्योधन के गुणों से द्रवित पृथ्वी उसके राज्य में धन उगलती रहती

Scanned with CamScanner

थी। महाकवि भारवि ने अपने शासक-मित्रों की आवश्यकता के अनुरूप, राजनीति शास्त्रीय विचारों को अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किये।

प्रथम सर्ग में गुप्तचर किरात के द्वारा दुर्योधन की जिस राज-व्यवस्था तथा उसके व्यवहार का वर्णन कवि ने किया है। वह समस्त राजनीतिक तथ्यों से समाविष्ट है। सर्वप्रथम भारवि ने गुप्तचर संस्था का महत्त्व बताते हुए उन्हें शासकों का नेत्र घोषित किया है। गुप्तचरों में कर्तव्यनिष्ठा तथा सत्यवादिता को आवश्यक माना है। राजा लोग गुप्तचर रूपी आँखों से ही देखते हैं अर्थात् उनसे प्राप्त तथ्यों के आधार पर ही वे भावी रणनीति तैयार करते हैं। इसके बाद कवि ने राजाओं और मंत्रियों की परस्पर अनुकूलता की सम्पूर्ण सफलताओं का प्रमुख कारण बताया है। जहाँ दोनों में तालमेल नहीं रहता, वहाँ कोई योजना सफल नहीं होती। उनका राज्य धीरे-धीरे विनाश की ओर अग्रसर होने लगता है-

"स किंसखा साधु न शास्ति योजधिपं
हितान्न यः संशृणुते स किं प्रभुः।
सदाऽनुकूलेषु हि कुर्वते रतिं
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।।"

कवि ने दर्शाया है कि सत्ता को सुरक्षित रखने के लिए शासक का जन-समर्थन प्राप्त करना भी आवश्यक है। उसे सदैव अपने बन्धुजन, अमात्यवर्ग तथा प्रजा को सन्तुष्ट रखना चाहिए। दुर्योधन स्वभाव से कुटिल होते हुए भी प्रजा की दृष्टि में पाण्डवों की अपेक्षा स्वयं को अच्छा शासक बताने के लिए सद्गुणों का प्रदर्शन करता है। यह राजनीतिक कौशल का एक अंग है।

शासक को सदाचारी एवं जितेन्द्रिय होना चाहिए। शासक का पद काँटों का ताज होता है। उसके लिए विश्राम का अवकाश कहाँ ? दुर्योधन भी आदर्श शासक की छवि बनाने के लिए आलस्य त्यागकर निरन्तर प्रजापालन में जुटा रहता है। परिजनों का हृदय जीतने के लिए गुणानुसार उनका उचित पुरस्कारादि से सम्मान भी करना चाहिए।

शासन को सुव्यवस्थित चलाने के लिए साम, दान, दण्ड, भेद आदि नीतियों का भी ज्ञान आवश्यक है। कवि ने इन सबका वर्णन किया है। आदर्श शासक शास्त्रोक्त दण्ड विधान से अपराध का नियंत्रण करते हैं। दण्ड विशेष का उद्देश्य किसी व्यक्ति विशेष को हानि या कष्ट पहुँचाना नहीं होता। धर्म के उल्लंघन को रोकना ही न्यायोचित दण्ड का उद्देश्य होता है। राजा को शत्रुओं से सदैव सावधान रहना चाहिए। शत्रुओं को अपनी दुर्बलता का पता नहीं लगने देना चाहिए। पुरस्कार मान आदि से सन्तुष्ट भृत्यगण सदैव अपने स्वामी का हितसाधन करने में तत्पर रहते हैं। कृतज्ञ शासक अपने सेवकों का हृदय जीत लेता है।

जो राजा दया, उदारता एवं प्रजारक्षण तत्परता आदि गुणों से युक्त होता है, उसके राज्य में सुरक्षा व्यवस्था के कारण आर्थिक प्रगति भी प्रचुर मात्रा में होती है। किरात ने दुर्योधन को भी ऐसे गुणों से सम्पन्न यशस्वी व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। ऐसे गुणी राजा के समृद्ध प्रदेश को पराजित करना कठिन होता है। जिस राजा के सैनिक योद्धा स्वामीभक्त हों उसे भी जीतना आसान कार्य नहीं है।

चतुर राजा अपनी नीतियों को गुप्त रखता है। लोगों को उसकी इच्छा का ज्ञान अनुकूल परिणाम सामने आने पर ही होता है।

Scanned with CamScanner

श्लेष और वक्रोक्ति से वह क्लिष्ट हो गई है किन्तु क्लिष्ट शब्द योजना होते हुए भी अर्थ गौरव विद्यमान है और विषयानुकूल शब्दावली का प्रयोग है।

भारवि में अपूर्व वर्णन शक्ति है। उनकी शैली में एक शान्त गरिमा और विचित्र आकर्षण भी है एवं उनमें अन्त: एवं बाह्य प्रकृति के निरीक्षण की अपूर्व क्षमता भी है। उनके कथोपकथन सार्थक, संक्षिप्त, रोचक एवं गौरवपूर्ण हैं। इनमें भावपक्ष और कलापक्ष का अद्भुत समन्वय है। उनकी मान्यता है कि काव्य में जितना गौरव अर्थ का है, उतना ही शब्द का भी है।

उनकी भाषा शैली में अर्थ गौरव की उक्ति पूर्णतया घटित होती है। उनके शब्द स्पष्ट उच्चारण के योग्य, श्रुत मधुर हैं। पदों में स्वच्छता, मधुरता एवं गम्भीरता देखने को मिलती है।

2. राजनीतिक-पटुता–महाकवि भारवि की यह एक प्रमुख एवं अद्वितीय विशेषता है। राजनीति का जितना उत्कृष्ट वर्णन इनके काव्य में प्राप्त होता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है। दुर्योधन कुटिल होते हुए भी किस प्रकार राजनीतिक चाल के द्वारा पाण्डवों से राज्य को प्राप्त करता है तथा प्रजा को अपने वश में किया हुआ है। साम, दान, दण्ड, भेद आदि सभी नीतियों का वर्णन कवि ने इस काव्य में किया है। पाण्डवों की परस्पर मंत्रणा में राजनीति की पटुता देखने लायक है। इससे कवि में व्यावहारिक ज्ञान की प्रौढ़ता एवं तार्किक शक्ति का पता लगता है।

3. रसाभिव्यक्ति–'किरातर्जुनीयम्' में वीर रस प्रधान होते हुए भी अन्य रसों का कवि ने सुन्दर समावेश किया है। अन्य रसों में से शृंगार-रस की ही प्रधानता है। साधारण पाठक इससे रसास्वादन करने में समर्थ नहीं हो पाता, जो व्याकरण निष्णात एवं सहृदय है, वही रसास्वादन कर सकता है।

4. अलंकार योजना–महाकवि भारवि अलंकारों के विशेष प्रेमी थे। भारवि ने अपने काव्यों को रुचिकर बनाने के लिए उसे अलंकारों से विभूषित किया है। उपमा, श्लेष, यमक, अर्थान्तरन्यास आदि अलंकारों का मनोरम व हृदयहारी प्रयोग किरातर्जुनीयम् में देखने को मिलता है। दैनिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली अनेक सूक्तियाँ भारवि ने अर्थान्तरन्यास के द्वारा अपने काव्य में समाविष्ट कर दी हैं।

5. छन्द विधान–भारवि विविध छन्दों के प्रयोग में भी अपने कौशल का परिचय देते हैं। उनके काव्य में द्रुतविलम्बित, उपजाति पुष्पिताग्रा एवं प्रहर्षिणी आदि तेरह छन्दों का प्रयोग मिलता है। उनका सर्वाधिक प्रिय छन्द 'वंशस्थ' है।

सारांश में यही कहा जा सकता है कि यद्यपि वर्णनों के अत्यन्त विस्तृत होने से तथा अलंकारों के प्रयोगाधिक्य से कवि का वर्ण्य विषय दब सा गया है फिर भी अर्थ गौरव ऐसा अद्वितीय गुण है जो कि अन्यत्र दुष्प्राप्य है। डॉ. बाबूराम त्रिपाठी के मतानुसार भले ही भारवि के काव्य में कालिदास जैसा गीतिमय माधुर्य न हो, हृदयावर्जक प्रासादिकता न हो फिर भी उनके काव्य में सुश्लिष्ट पद विन्यास, अर्थ गौरवमय पदों का विलास, राजनीति का तात्त्विक रीति से प्रतिपादन, व्यवहार कुशलता, नैतिक सूक्तियाँ, अनुभव की विशालता, कथोपकथन की पटुता, उनकी प्रौढ़ अनुभूति और भावुकता तथा विशद् एवं सुरम्य प्रकृति चित्रण उनके कवित्व को अमर बनाए रखने के लिए पर्याप्त हैं।

इस प्रकार भारवि का काव्य अर्थगाम्भीर्य, भाव सौन्दर्य, विचारवैभव एवं शिवत्वाभिमुख जीवन दृष्टि से ओतप्रोत है। उनकी परिमार्जित भाषा एवं अलंकृत काव्य शैली ने उसे विद्वन्मण्डली में सदैव प्रसिद्धि प्रदान की है। भारवि के सम्बन्ध में प्रचलित विविध प्रशस्तियाँ इसकी प्रमाण हैं।

Scanned with CamScanner

प्रश्न 6. 'किरातार्जुनीयस्य व्युत्पत्ति' विलिख्य प्रथमसर्गस्य सारांशः लिखत।

('किरातार्जुनीयम्' शब्द की व्युत्पत्ति समझाकर प्रथम सर्ग का सारांश लिखिये।)

उत्तर–'किरातार्जुनीयम्' पद में दो शब्द हैं–'किरात + अर्जुन' अर्थात् किरात व अर्जुन से सम्बन्ध रखने वाली कथा जहाँ प्रधान हो वह 'किरातार्जुनीयम्' (काव्य नपुंसकलिंग होने से) (अनीयर् प्रत्यय करने के उपरान्त) पद सिद्ध होता है। इसमें किरात वेषधारी भगवान शंकर और अर्जुन का रोमांचकारी युद्ध वर्णन होने के कारण ही इसका नाम 'किरातार्जुनीयम्' रखा गया है।

इसके प्रथम सर्ग को हम वर्णन की दृष्टि से दो भागों में विभक्त कर सकते हैं– (1) युधिष्ठिर के प्रति वनेचर की उक्ति तथा (2) युधिष्ठिर के प्रति द्रौपदी की उक्ति। इस सर्ग का सारांश इस प्रकार है–

जब महाराज युधिष्ठिर को दुर्योधन ने छल-कपट से द्युत क्रीड़ा में पराजित कर दिया तथा उनका समस्त राज्य लेकर 12 वर्ष वन में रहने तथा एक वर्ष अज्ञातवास के रूप में व्यतीत करने के लिए भेज दिया, तब युधिष्ठिर द्रौपदी व अपने भाइयों के साथ आकर द्वैतवन में रहने लगे। युधिष्ठिर ने दुर्योधन की राज व्यवस्था एवं व्यवहार को जानने के लिए एक गुप्तचर को ब्रह्मचारी के वेष में हस्तिनापुर में भेजा (वह गुप्तचर वहाँ की समस्त जानकारी लेकर द्वैतवन में वापस आया तथा शिष्टतापूर्वक नमस्कार करके शत्रु की वास्तविक स्थिति बतलाने के लिये निःसंकोच तत्पर हुआ।

यहीं से प्रथम सर्ग का प्रारम्भ होता है। युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर उस गुप्तचर ने स्पष्ट शब्दों में यथार्थ स्थिति का वर्णन करते हुए कहा कि हे महाराज! दुर्योधन इस समय नीतिपूर्वक राज्य कर रहा है। जिस राज्य को उसने पूर्व में छल-कपट से जीता है उसे वह अब नीतिपूर्वक जीतने का प्रयास कर रहा है। यद्यपि वह दुर्योधन सिंहासनारूढ़ है फिर भी वनवासी आपसे सदैव भयभीत रहता है तथा न्यायप्रिय शासन द्वारा प्रजा को प्रसन्न करने का प्रयास कर रहा है। वह काम, क्रोधादिक षड् अरिवर्ग को जीतकर एवं विनीत भाव से रहते हुए निरालस होकर मनु द्वारा प्रतिपादित मार्ग से शासन करता हुआ अपने पुरुषार्थ का विस्तार कर रहा है।

वह अपने आश्रितों को मित्रवत्, मित्रों को बन्धु के समान तथा बन्धुओं को राज्य के स्वामी के समान समझता हुआ प्रतीत होता है। धर्म-अर्थ-काम इन तीनों का समान रूप से निष्पक्ष भाव के साथ सेवन करता है। साम-दान-दण्ड-भेद आदि उपायों का नीति एवं कुशलता से प्रयोग कर रहा है। वह कर्त्तव्य पालन में पुत्र एवं शत्रु के साथ एकसा व्यवहार करता है।

उसके द्वारा शासित कुरुदेश वर्तमान में अत्यन्त समृद्ध एवं धन-धान्य सम्पन्न है। राज्य में सिंचाई की उत्तम व्यवस्था के कारण प्रजा सुखी है। उसके गुणों से आकृष्ट पृथ्वी दुर्योधन के लिए धन-सम्पत्ति उगल रही है, जिससे वह कुबेर के तुल्य दिखाई देता है। प्रशंसनीय कार्यों के लिए वह कर्मचारियों को पुरस्कृत करता है। योद्धा लोग प्राण देकर भी उसकी रक्षा करना चाहते हैं। उसे धनुष उठाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। राजा लोग उसे स्वयं ही दरबार में आकर भेंट स्वरूप हाथी, घोड़े आदि सम्पत्ति देते हैं, व सम्मानपूर्वक उसकी आज्ञा का पालन करते हैं। वह धर्म, कर्म में भी रुचि रखता है। दुःशासन को युवराज बनाकर पुरोहित के आदेशानुसार यज्ञादि कर्म करता है। यह सब होते हुए भी आपकी ओर से आने वाले भय से वह सदैव भयभीत रहता है तथा अर्जुन व आप लोगों का नाम प्रसंगवश आने पर नतमस्तक हो जाता है।

यह सब वर्णन करने के उपरान्त वह कहता है कि अब आप उसे जीतने के लिए शीघ्र ही

Scanned with CamScanner

कोई उपाय करें। मेरा कार्य आपको वस्तुस्थिति से अवगत कराना था जो मैंने कर दिया। इसके बाद महाराज युधिष्ठिर से पुरस्कार लेकर वह चला जाता है।

युधिष्ठिर द्रौपदी के भवन में जाकर अपने भाइयों के समक्ष वनेचर ने जो वृत्तान्त सुनाया था उसे सभी को सुनाया। शत्रु दुर्योधन की समृद्धि, नीति तथा उन्नति का समाचार सुनकर द्रौपदी व्यथित हो उठी तथा उसने युधिष्ठिर से कहा हे नाथ! स्त्री का उपदेश आप जैसे महानुभावों के लिए अपमान के समान है, परन्तु मेरे चित्त की व्यथा मुझे कहने के लिए विवश करती है। महाराज आपके अतिरिक्त कौन ऐसा राजा होगा जो अपनी स्त्री के समान राजलक्ष्मी को दूसरे के अधीन कर देगा। इसके बाद वह क्रमशः भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा स्वयं युधिष्ठिर की पूर्व की स्थिति तथा वर्तमान स्थिति का तुलनात्मक वर्णन प्रस्तुत करके उन्हें शत्रु से बदला लेने के लिए उत्साहित करना चाहती है। वह कहती है कि इस सम्पूर्ण दुर्दशा का कारण दुर्योधन है।

अतः आप शान्ति छोड़कर शत्रुओं को नष्ट करने का उपाय कीजिए। शान्ति से मुनियों को सिद्धि मिलती है राजाओं को नहीं और यदि आप शान्ति को ही सुख का साधन मानते हो तो राजचिह्न धनुष आदि को त्यागकर जटा बढ़ाकर केवल मुनियों की भाँति अग्निहोत्र करें। हे महाराज! आप सब प्रकार से समर्थ हैं अतः आप शत्रु पर विजय पाने के लिए समय की प्रतीक्षा न कीजिए, विजयेच्छु राजा किसी भी बहाने से सन्धिभङ्ग कर देते हैं।

वह अन्त में कहती है कि मेरी शुभकामना है कि जैसे अन्धकार को नष्ट करके सूर्य पुनः पूर्ण तेज के साथ उदय होता है तथा अपनी कान्ति सर्वत्र फैला देता है, वैसे ही आप भी शत्रु रूपी अन्धकार को नष्ट करके निरन्तर प्रगति पथ पर आगे बढ़ें।

प्रश्न 7. महाकवेः भारवेः स्थितिकालः वर्णयत।

(महाकवि भारवि की स्थिति-काल का निरूपण कीजिए।)

उत्तर—संस्कृत के बहुसंख्यक रचनाकारों के जीवन के बारे में हमें बहुत कम जानकारी मिलती है। भारवि के समय-निर्धारण अथवा स्थिति-काल के विषय में हमें निम्नलिखित ऐतिहासिक साक्ष्य प्राप्त होते हैं, जिसके आधार पर भारवि के स्थिति काल की पूर्वा पर-सीमा निश्चित करने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

(1) ऐहोल शिलालेख (634 ई.) में भारवि का नामोल्लेख।

(2) जयादित्य की काशिका वृत्ति (660 ई.) में 'किरातार्जुनीयम्' से उद्धरण।

(3) माघ के द्वारा भारवि का अनुकरण।

(4) गंग राजकुमार दुर्विनीत (580 ई.) के द्वारा किरातार्जुनीयम् के पञ्चदश सर्ग की टीका।

(5) अवन्ति सुन्दरी कथा एवं अवन्ति सुन्दरी कथासागर में दण्डी के पूर्व पुरुषों का विवरण।

(6) कालिदास का भारवि काव्य पर प्रभाव।

उपर्युक्त साक्ष्यों में प्रथम चार साक्ष्य महाकवि भारवि के जीवनकाल की उत्तर सीमा निर्धारित करने में सहयोग देते हैं। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साक्ष्य ऐहोल अभिलेख (634 ई.) है। बीजापुर (महाराष्ट्र) के पास ऐहोल ग्राम के जैन मन्दिर में उत्कीर्ण इस अभिलेख में चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय के समाश्रित जैन कवि रविकीर्ति ने स्वयं को कालिदास एवं भारवि के समान ख्याति प्राप्त कवि बताया है।

Scanned with CamScanner